SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

इक्कीसवीं सदी में गाँधी और शांति

जितेन्द्र कुमार, Ph.D., इतिहास विभाग
मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, बिहार, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
जितेन्द्र कुमार, Ph.D.

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 28/12/2023
Revised on : -----
Accepted on : 29/02/2024
Overall Similarity : 01% on 21/02/2024

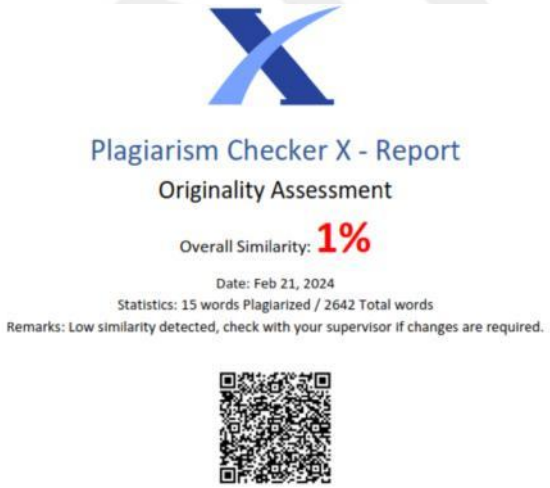

शोध सार

आज हमारे बीच गाँधी नहीं हैं। वह एक विचार एवं आस्था बनकर हमारे बीच से 79 वर्ष की आयु में जुदा हो गए, जबकि वे 125 वर्ष तक जीवित रह कर दुनिया की सेवा करना चाहते थे।[1] लेकिन, वैसा संभव न हो पाया। भारत की स्वतंत्रता–प्राप्ति हेतु सतत संघर्षशील रहने के साथ स्वराज्य के स्वप्न को सार्थक बनाने के लिए उन्होंने अहिंसा को सुदर्शन चक्र मानकर सविनय आन्दोलन से भारत को स्वतंत्र किया और शस्त्र–विहीन क्रांति से विश्व में एक अनूठा आदर्श प्रस्तुत किया। अपने अनोखे युद्ध के अथक योद्धा होते हुए भी वह इतने अधिक प्रेम अध्यात्म के पुरुष थे कि बरबस उन्हें 'महात्मा' कहना पड़ा।[2] इतना ही नहीं स्वतंत्रता के बाद भारत ने कृतज्ञतावश उन्हें अपना राष्ट्रपिता माना है।

मुख्य शब्द

स्वराज्य, अहिंसा, शांति, विश्व गुरू, ग्रामोउद्योग, महात्मा गाँधी.

भूमिका

महात्मा गाँधी का आर्विभाव मानव जाति के लिए एक अभूतपूर्व घटना थी। गाँधी न अवतार थे, न देवता। वे हमारी तरह के प्राणी थे, जो गुजरात के एक उच्च मध्यवर्गीय परिवार में पैदा हुए थे तथा अपनी सूझ–बूझ त्याग तथा चरित्र व नैतिक बल से उन्होंने संपूर्ण विश्व को शान्ति और अहिंसा का एक नया मार्ग दिया।[3] अल्बर्ट आइन्स्टीन के शब्दों में ''गाँधी जी जनता के ऐसे नेता थे, जिसे किसी बाह्य सत्ता की सहायता प्राप्त नहीं थी। वह एक ऐसे राजनीतिज्ञ थे, जिसकी सफलता न चालाकी पर आधारित थी और न किसी शैल्पिक उपाय के ज्ञान पर, बल्कि उनके व्यक्तित्व की दूसरों को कायल कर देने की शक्ति पर आधारित थी। वह एक ऐसे विजयी योद्धा थे, जिसने बल प्रयोग का सदा उपहास किया। वह बुद्धिमान,

दृढ़ संकल्पी, नम्र और अडिग निश्चय व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी सारी ताकत अपने देशवासियों को उठाने और उनकी दशा सुधारने में लगा दी। वह एक ऐसे व्यक्ति थे, जिसने यूरोप की पाशविकता का सामना मानवीय यत्न के साथ किया और इस प्रकार सदा के लिए सबसे ऊँचे स्थान पर गए। आने वाली पीढ़ियाँ शायद मुश्किल से यह विश्वास कर सकेंगी कि गाँधी जैसा हाड़–मांस का पुतला कभी इस धरती पर हुआ होगा।''[4]

गाँधी की सबसे बड़ी विशेषता थी कि उनकी कथनी एवं करनी में एकरूपता थी; इसीलिए अतएव 'अधनंगा फकीर' के रूप में प्रतिष्ठित हो युग पुरुष हुए। उनके समकालीन महापुरुषों में लिंकन, मार्क्स, माओ, विवेकानंद आदि हुए, लेकिन गाँधी की अभिव्यक्ति इन सभी विचारकों से भिन्न थी। गाँधी के विचारों की भिन्नता उनकी प्राभाविकता इसी बात से समझी जा सकती है कि आधुनिक युग में गाँधी के विचारों से अधिक विवादास्पद और कोई विचारदर्शन नहीं है।[5] गाँधी के विचारों की इस विवादास्पदता के मूल में उनकी सहज प्रभावित करने वाली शक्ति है, जिससे उनके विचार सीधे मनुष्य के मर्म पर आघात करते हैं और उसमें स्थायित्व होता है; क्योंकि उनका रास्ता साधन–शुद्धि को साथ लेकर चलना है, अर्थात् साध्य के लिए साधन का पवित्र होना आवश्यक है। साम्यवाद, पूँजीवाद और समाजवाद से लेकर विश्व की कितनी ही चमत्कृत शासन पद्धतियां असफल हो गयीं, लेकिन गाँधी का स्वराज्य एक प्रकाश–पुंज के रूप में अपनी अग्नि–परीक्षा में सफल होकर निकला।

विश्व की प्राचीनतम संस्कृति एवं सभ्यता या तो कमोबेश मिट गई या उसके स्वरूप् में परिवर्तन आ गया। लेकिन, भारतीय सभ्यता एवं सस्कृति अनेक विदेशी आक्रमणों को झेलकर भी प्रायः यथावत् रही। भौतिक साधनों की दृष्टि से उसके पास इतनी अनमोल निधि थी कि वैभवशाली राष्ट्रों ने भी उसके सामने सिर झुकाया। गाँधीजी ने आधुनिक युग में उस कीर्ति में चार चांद लगाए। संपूर्ण विश्व ने अनुभव किया कि गाँधी जैसा चरित्र का धनी संसार में दूसरा व्यक्ति नहीं है।[6] अन्य देशों के लोग भारत को मुख्यतः तीन विभूतियों के माध्यम से पहचानते हैं–बुद्ध, विवेकानंद एवं गाँधी। गाँधीजी ने कहा था–'मेरा जीवन ही मेरा संदेश है।' इसलिए उनका जीवन ही उनका जीवन दर्शन है। उनका जीवन बहुरंगी और उनकी प्रतिभा बहुमुखी थी। वे एक साथ ही बुद्ध और मुहम्मद की तरह पैगम्बर, वाशिंगटन और गैरीबाल्डी की तरह मुक्तिदाता सुकरात और कन्फ्यूशियस की तरह शिक्षक मार्क्स और सन्तोकनी की तरह अर्थशास्त्री और कृष्ण तथा अशोक की तरह राजनेता थे।[7] वे ईसामसीह की तरह न तो अपने समाज से त्याज्य थे और न राम की तरह पूज्य। गाँधी को समझना शायद, इसलिए आज आवश्यक अनुभव हो रहा है कि उस आदमी में ऐसा क्या था कि जो प्रचलित रूढ़ियों से भिन्न बातें करता हुआ भी जनता का प्यारा था। जीवन का शायद कोई ऐसा पहलू नहीं रहा होगा, जिसको उन्होंने प्रभावित नहीं किया और अपने ढाँचे में न ढाला। विरोधी बातों की वकालत करता हुआ भी लोगों के मन में बसा हुआ था, जिसे लोगों ने जी भरकर प्यार भी किया और अन्त में गोली मार दी।[8]

स्वाधीन भारतः विकास एवं ह्रास

स्वतंत्रता–प्राप्ति के बाद गाँधीजी देश के पुनर्निर्माण में महत्त्वपूर्ण काम करना चाहते थे इसलिए उन्होंने 29 जनवरी, 1948 में 'आखिरी वसीयतनामा' में स्पष्ट उल्लेख किया था–'हिन्दुस्तान आजाद हुआ है, लेकिन अभी भी सिर्फ राजनैतिक आजादी मिली है। शहरों और कस्बों से भिन्न उसके लाख गांवों की दृष्टि से सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आजादी हासिल करना अभी बाकी है।' वे कांग्रेस को विसर्जन कर और उसे लोक सेवक संघ का निर्माण करना चाहते थे–सत्ता की जगह सेवा करने के लिए। दुर्भाग्यवश दूसरे दिन ही गाँधीजी का बलिदान हो गया। उसके बाद आज तक के 77 वर्ष का इतिहास एक–एक करके गाँधी के सपने के बिखरने का इतिहास है। राजनैतिक क्षेत्र हो या नैतिक–हर क्षेत्र में भारतीय समाज गाँधी की कल्पना के बिल्कुल विपरीत दिशा में गया है।[9] यही कारण है कि आज हम अनैतिक मूल्यों के भयानक दुष्चक्र में फँस गए हैं। हमारे चारों ओर व्याधियाँ–ही–व्याधियाँ हैं। सम्पूर्ण देश इस दुरावस्था से हैरान, चिंतित एवं असहाय महसूस कर रही है।

हम मानते हैं कि विगत 77 वर्षों में देश ने औद्योगिक तथा तकनीकी क्षेत्रों में आश्चर्य उन्नति की है। परावलम्बी देश को भौतिक दृष्टि से स्वावलम्बी बनाया है। हमने अपनी परंपरागत सांस्कृतिक जीवनशैली पर बिना ध्यान दिए

पाश्चात्य जगत से प्रगति की होड़ में अपने प्रौद्योगिकी का विकास तो कर लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि एक ओर तो हमने 'अग्नि' एवं 'पृथ्वी' का परीक्षण किया तथा अणु–विस्फोट में भी सफल रहे हैं।[10] किन्तु, हमारी निश्चित धारणा है कि भौतिक उपलब्धियाँ मनुष्य के लिए हैं। मनुष्य उनके लिए नहीं है। मनुष्य को रोटी चाहिए, किन्तु वह रोटी के लिए जीवित रहे तो अपने जीवन को सार्थक नहीं बना सकता।[11] मानव जीवन का चरम उद्देश्य स्वयं अपना परिष्कार करना है। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' एवं 'वसुधैव कुटुम्बकम' का मार्ग गाँधी का था, उसे लोगों ने सहज त्याग दिया।

भारतीय राजनीति किस ओर अग्रसर है, यह अब बताने की आवश्यकता नहीं है। दल मुख्य हो गए हैं, देशहित गौण हो गया है। दलीय राजनीति की दलदल से बचना कठिन हो रहा है तथा उसका प्रभाव प्लेग के समान फैलता ही जा रहा है। दलीय राजनीति न 'गाँधी' रही, न 'सुभाष'। और गाँधी आज एक ऐसा चेहरा भर है, जो वैभव के अनुसार चौखटों में जड़ा हुआ है, स्वागत कक्षों की दीवारों की बेजान शोभा बना दिया गया है। गाँधी गृहत्यागी नहीं थे, मानव–मुक्ति का मार्ग दिखाने के लिए गृहत्याग नहीं किया, बुद्ध ने किया था। गाँधी 'घर' में रहे, किन्तु सत्ता से दूर रहने का चिंतन दिया और सत्ता से दूर रहे, निर्लिप्त रहे।[12]

दलीय राजनीति को बुद्ध का तो स्मरण ही क्यों कर लेता, वह तो गाँधी को ही भूल गई। कटु सत्य शायद यह है कि सत्ता की चरण–वंदना में ध्यानमग्न होकर दलीय राजनीति गाँधी को ही खा गई। वह बेसमझ नारों में उलझ गई और जनमानस को इस उलझन में फँसाने तथा फँसाये रखने के तमाम उपाय करने लगे। यही कारण है कि जे.पी. की सम्पूर्ण क्रान्ति भी हवा में उड़ गई आज उसका वजूद कहाँ है?[13]

आज की दलीय पद्धति के मूल में ही तानाशाही छिपी हुई है जिसका सूत्र कुछ या अधिकतर एक दो व्यक्तियों के पास रहता है। जनता इससे संत्रस्त है।[14] इसलिए मानवेन्द्रनाथ राय ने पार्टी सिस्टम को संपूर्ण जनता और समाज के खिलाफ एक षड्यंत्र माना है। सत्तासीन होने के लिए पार्टियाँ जातिवाद, क्षेत्रवाद, धर्मवाद आदि सब तरह के गन्दे हथकंडों का कमोबेश प्रयोग करती है।[15] उनके सामने राष्ट्रहित गौण और परहित के स्थान पर स्वहित आधार होता है। प्रो. बार्कर का यह कहना न्यायसंगत है कि ''जहाँ तक राजनैतिक शुद्धि या देशभक्ति का प्रश्न है, पार्टियाँ कठघरे में ही जाती हैं।''[16] जनमत के शिक्षण के बदले पार्टियाँ जनता में राजनैतिक चेतना के अभाव का लाभ लेकर उनकी भावनाओं को उभार कर अपना उल्लू सीधा करती है।[17] अतएव, आज जनता की राजनीति नहीं, अपितु दल को राजनीति ही चलती है। किन्तु आवश्यक तो यह है कि सभी स्तरों पर सत्ता जनता के हाथों में आनी चाहिए; क्योंकि तभी जनता का अभिक्रम जगेगा और पुरुषार्थ प्रकट होगा। इसके लिए पक्षविहीन एक नयी राजनीति का विकास होना चाहिए।[18] गाँधीजी ने पाश्चात्य प्रजातंत्र को फासिस्टवाद और नाजीवाद से ही मिश्रित माना है। आज का लोकतंत्र दलतंत्र है,[19] एवं दलतंत्र मूलतः अधिनायकत्व की माता है।[20] यों भी लोकतंत्र में लोक–गौण हो गया है तथा 'तंत्र' हावी, अतः लोकतंत्र के लिए लोकनीति होनी चाहिए। लोकनीति से लोकतंत्र का व्यापक आधार होता है इसलिए लोकनीति के आधार पर टिके हुए शासन संगीनों की साया[21] की कम जरूरत होगी। लोकनीति का आधार स्वशासन या स्वराज्य है।

गाँधी को गए अभी आठ दशक ही हुए हैं, कि 'विश्व गुरु' एवं 'सोने की चिड़िया' के रूप में जाना जाने वाला यह भारत आज विश्व पहचान तो बनाया है, लेकिन विकसित राष्ट्र का दर्जा नही ले पाया है। एक विदेशी ईस्ट इंडिया कम्पनी ने व्यापार के बहाने संपूर्ण देश पर वर्षों तक शासन किया और अब तो बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की बहार आई हुई है। लगभग दो सौ वर्षों तक गुलाम रहने के बाद भी उस पीड़ा को भुलाकर केन्द्रीय सरकार वैश्विक उदारीकरण का अन्धानुकरण करते हुए देश को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की शरणस्थली बनती जा रही है, इसके लिए राष्ट्रीय हित की उपेक्षा की जा रही है। आज भारत गाँधी को भूल चुका है। ग्रामोद्योग 'मिशन' से 'कमीशन' हो चुकी है। हम विदेशी ऋण ले रहे हैं और विदेशी कम्पनियों के उपभोक्ता बन रहे हैं। आज देश में सभी क्षेत्रों में तेजी से अपराधीकरण हो रहा है। हिंसा, डकैतियां, हत्या, महँगाई आदि ने देश की चेतना को विकृत कर दिया है। देशभक्ति एवं देशप्रेम अब काल–बाह्य हो गयी है। नयी पीढ़ी, जिस पर देश का भविष्य निर्भर करता है, अनेक प्रकार के

दुर्व्यसनों का शिकार हो रही है।

भ्रष्टाचार ने तो अंगद के पांव की तरह अपने को जमा लिया है तथा अब तो भ्रष्टाचार शिष्टाचार हो गया है। नागरिक जीवन ऊपर से नीचे तक इसी दुष्चक्र में फँस गया है। जिनके पास देने को है, उन्होंने उनलोगों के लिए भारी संकट पैदा कर दिया है, जिनके पास देने को नहीं है।[22] इतना ही नहीं सरकार तो अब संकोचरहित होकर कहती है कि भ्रष्टाचार हमारे देश की नहीं, सारी दुनिया की समस्या है और महंगाई कहाँ नहीं है। गाँधीजी ने डंके की चोट पर कहा था–''मेरा जीवन ही मेरा संदेश है।'' वर्तमान के नेताओं ने डंके की चोट पर दिखा दिया कि उनका जीवन भ्रष्टाचार का पर्याय है। केन्द्र तथा राज्यों में कुछ अपवादों को छोड़कर सभी नेता एवं अधिकारी कमोवेश भ्रष्टाचार में लिप्त हैं। आजादी के बाद भौतिक प्रगति अद्वितीय गति से हुई–भीमकाय कारखाने खुले हैं, लेकिन दुर्भाग्य से एक भी ऐसा कारखाना नहीं खुला, जिसमें देशवासियों के चरित्र का निर्माण हो।[23] यही कारण है कि देश में स्वतंत्रताप्राप्ति के बाद से नैतिक मूल्यों के अभाव में भ्रष्टाचार, अनाचार, अत्याचार, कदाचार, यौनाचार आदि निर्विघ्न फल–फूल रहे हैं।

आज समूचे देश में शराफत कराह रही है और सिसक रही है। सत्य की अर्थियाँ नित्य प्रति निर्विराम सर्वत्र उठ रही हैं। आपाधापी और लूट–खसोट की भयावह बयार चल रही है, समूचे देश में अराजकता का ऐसा वातावरण बन गया है कि हर कोई निरंकुश हो रहा है। सरकार भी है, कानून भी है, समाज की अन्य शक्तियाँ भी हैं, सब है और कुछ भी नहीं है।[24] कुर्सी ऊँची और मनुष्य नीचा हो गया है। हिंसा अहिंसा पर हावी हो गई है। मुट्ठी भर लोग ऐश कर रहे हैं, जनता त्राहि–त्राहि कर रही है। ईमानदार आदमी के लिए जीना दूभर हो रहा है।[25] देश की वर्तमान राजनीति को गंदगी में दुर्गन्ध आने लगी है। राजनैतिक पदों का आकर्षण सत्य को दबाता जा रहा है। सत्याग्रह की आड़ में दुराग्रह अब अधिक होने लगा है। उनके देशवासी राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार में उनके द्वारा प्रतिपादित उच्च मर्यादाओं के पालन करने में लगभग असमर्थ बन गए हैं। मर्माहित वाणी से यह कहा जाता है कि राजघाट की समाधि पर 2 अक्टूबर एवं 30 जनवरी को श्रद्धांजलि का कर्मकाण्ड तो प्रत्येक वर्ष होता है, लेकिन भारत में बापू की विचारधारा का वध तो निर्बाध गति से होने लगा है और इस तरह उनकी असली हत्या तो अब प्रतिदिन हो रही है। नयी आर्थिक नीति के नाम पर बापू के स्वदेशी, स्वावलंबन का श्राद्ध हो गया।[26] आम नागरिक भययुक्त है तथा अपराधी निर्भय हो गया है, क्योंकि अपराधी जानता है कि सत्ताधारी का आशीर्वाद उन्हें प्राप्त है। अच्छे लोग अपने–अपने घरों में सिमट गए और बुरे लोगों का फैलाव हो गया।

निष्कर्ष

मानवीय सभ्यता एवं संस्कृति की रक्षा और मानवजाति का अस्तित्व अभीष्ट है तो वर्तमान युग में सभी राष्ट्रों को हिंसा और युद्ध के घातक मार्ग का परित्याग करके अहिंसा एवं शान्ति का पावन मार्ग ग्रहण करना होगा।[27] साथ ही मानवोचित गुणों के विकास के लिए विज्ञान–प्रदत्त अपार शक्ति का विध्वंसात्मक उद्देश्यों में न लगाकर शान्तिपूर्ण कार्यों के लिए सदुपयोग किया जाये तो दरिद्रता, रोग, बेकारी और अज्ञान से मुक्त होकर अधिक सुखी तथा समृद्ध हो सकता है। लेकिन, यह तभी संभव है, जब विश्व के सभी राष्ट्र अहिंसा और शान्ति के उस पुनीत मार्ग पर चलने का दृढ़ संकल्प कर लें जिसका प्राचीन काल में गौतम बुद्ध तथा ईसा ने और आधुनिक युग में गाँधी ने उपदेश दिया है।[28] इसमें थोड़ा भी संदेह नहीं कि मानव जाति को अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए अन्ततः यही शान्तिमय मार्ग ग्रहण करना पड़ेगा, क्योंकि इसके अतिरिक्त अपना अस्तित्व बनाए रखने का उसके समक्ष अन्य कोई उपाय नहीं है।[29] इस सम्बन्ध में देशरत्न डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का यह कथन पूर्णतः सत्य है कि ''यदि इस संसार को जीवित रहना है और आपस की लड़ाई से टुकड़े–टुकड़े नहीं होना है तो उसे गाँधीजी की विचारधारा के अनुसार ही चलना होगा, जो भारत के लिए ही नहीं, सारी दुनिया के लिए है।[30]

गंगा की कसम यमुना की कसम
वह ताना बाना बदलेगा
तुम खुद बदल तुम खुद तो बदल
तब तो यह जमाना बदलेगा।

संदर्भ सूची

1. सुब्बाराव, एस.एन. (1995) *''जीवन साहित्य (गाँधी विशेषांक)'',* सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली, पृ. 24।
2. कुमार, जैनेन्द्र, (1995) *''इक्कीसवीं सदी में गाँधी''* श्याम प्रकाशन, अल्मोड़ा, पृ. 64।
3. बोहरा, ओंकार लाल, (1995) *''जीवन साहित्य (गाँधी विशेषांक)''* सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली, पृ. 43।
4. संपादित, (1992) ''गाँधी व्यक्तित्व विचार और प्रभाव'', *आइडियल रिसर्च,* विसननगर, गुजरात, पृ. 20।
5. बटरोही (संपादक), (1995) *'भूमिका' इक्कीसवीं सदी में गाँधी,* श्याम प्रकाशन, अल्मोड़ा, पृ. 67।
6. जैन, यशपाल, (1995) *''जीवन साहित्य''* अगस्त, सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली, पृ. 328।
7. सिंह, रामजी, (1972) *''गाँधी–दर्शन मीमांसा''* बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, पृ. 11।
8. बटरोही, पूर्वोक्त।
9. ढड्डा, सिद्धराज, (1995) ''जीवन साहित्य'' गाँधी विशेषांक, सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली, पृ. 16।
10. सिंह, रामजी, (1995) *''गाँधी विचार''* मानक पब्लिकेशन दिल्ली, पृ. 112।
11. जैन, यशपाल, (1995) *''जीवन साहित्य''* जनवरी–फरवरी, सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली, पृ. 86।
12. त्यागी, धमेन्द्र बी. आर., (1994) ''नवभारत टाइम्स'' दिल्ली।
13. पूर्वोक्त।
14. नारायण, जयप्रकाश, (1998) *''भौलेन्ट्री सोशलिज्म ऑफ परसुएशन''* सर्व सेवा संग प्रकाश्न, वाराणासी, पृ. 148।
15. ठक्कर, विमला, (1957) *''दादा की नजर में लोकनीति''* अ.भा.सं काशी, पृ. 7।
16. राय, मानवेन्द्र, (1950) *''पॉलिटिक्स पावर एण्ड पार्टी''* कलकत्ता, पृ. 93।
17. नारायण, जयप्रकाश, (2013) ''फ्राम सोशलिज्म टू सर्वोदय'' सर्व सेवा संग प्रकाश्न, वाराणासी, पृ. 34–35।
18. सिंह, रामजी, पूर्वोक्त, पृ. 68।
19. पूर्वोक्त, पृ. 68।
20. पूर्वोक्त, पृ. 68।
21. जैन, यशपाल, ''जीवन साहित्य'' अगस्त 1995, पृ. 325।
22. पूर्वोक्त, पृ. 289।
23. त्यागी धर्मेन्द्र बी. आर., पूर्वोक्त।
24. जैन, यशपाल, पूर्वोक्त, पृ. 290।
25. सिंह, रामजी, पूर्वोक्त, पृ. 83।
26. वर्मा, वेद प्रकाश, पूर्वोक्त, पृ. 199।
27. सिंह, रामजी, ''गाँधी विचार'' पूर्वोक्त पृ. 115–116।
28. वर्मा वेद प्रकाश, पूर्वोक्त, पृ. 199।
29. पूर्वोक्त, पृ. 199।
30. प्रसाद, राजेन्द्र, ''महात्मा गाँधी की देन'' पृ. 7।

****